प्रवचन नं. १३ गाथा-१५-१७ सोमवार, दिनाङ्क २८-०३-१९६६
चैत्र शुक्ला ६, वीर संवत् २४९२

यह इष्टापदेश, पूज्यपादस्वामी का इष्टोपदेश है। इसमें १५वीं गाथा अन्तिम हिन्दी श्लोक। १५ गाथा।

दोहा – आयु क्षय धनवृद्धि को, कारण काल प्रमान।
चाहत हैं धनवान धन, प्राणनिते अधिकान।।१५।।

कहते हैं कि लक्ष्मी के अर्थी, आयु घटती जाती है, ऐसा नहीं जानते परन्तु लक्ष्मी आदि बढ़ती है, उस पर उनकी नजर है। समझ में आया? ऐसा मनुष्यपना वह धर्म के साधन के लिए चाहिए, उसके बदले वे लक्ष्मी प्राप्त करने के लिए आयुष्य का काल घटता जाता है और उसमें लक्ष्मी आदि बढ़ती जाती है, पुत्र बढ़ते जाते हैं, परिवार बढ़ता जाता है, ब्याज बढ़ता जाता है, ऐसी उसकी-मूढ़ की दृष्टि है, ऐसा कहते हैं।

मुमुक्षु : ऐसी मूढ़ की दृष्टि है?

पूज्य गुरुदेवश्री : मूढ़ की दृष्टि है। कहो, पोपटभाई! आहा..हा..! इस देह में मनुष्यपना तो आत्मा पुण्य-पाप के विकार के बन्धनरहित स्वभाव साधन के लिए मनुष्य देह है। स्वभाव साधन; बन्धन साधन के लिए यह मनुष्य देह नहीं है। आत्मा शुद्ध चैतन्यमूर्ति को अन्तर्मुख में बन्धन के भावरहित रुचि, श्रद्धा—ज्ञान से आत्मा का साधन करना, वह कल्याण का मार्ग है, उसके लिए यह मनुष्य देह है। इसके बदले अज्ञानी पैसा कमाने में ऐसा मानता है कि हमारे पैसा बढ़ा। परन्तु आयु घट जाती है और काल चला जाता है, ऐसी उसे खबर नहीं है।

मुमुक्षु : नुकसान होता है या लाभ होता है?

पूज्य गुरुदेवश्री : बड़ा नुकसान, अब इसे कितना नुकसान कहना? यह तो ऐसा मानता है कि हम बढ़े हैं। पहले छोटे थे, तब ऐसा नहीं था। यह पैसे बढ़े, कुटुम्ब बढ़ा, इज्जत से बढ़े, लक्ष्मी से बढ़े, मकान बढ़े, साम, दाम और ठाम। पोपटभाई! ऐसे बढ़े। यहाँ आचार्य कहते हैं, परन्तु तेरा आयुष्य घटा। धर्म तो ठीक एक ओर रहा। जो मनुष्य का

आयुष्य लेकर आया है, जितनी स्थिति है, वह घटती जाती है, घटती जाती है। आत्मा के कल्याण के लिए जो प्रयोग करना चाहिए, वह तो तू करता नहीं परन्तु यह वृद्धि देखकर, आयुष्य घटता है, वह भी तू देखता नहीं - ऐसा कहते हैं। समझ में आया? बराबर होगा या नहीं? मलूकचन्दभाई! क्या... होता है लोगों को, अपने लड़के बढ़े, अपने कुछ था? पिता के पास इतनी पूँजी नहीं थी, तथा लड़का ऐसा नहीं था। यह सब, पैसा बढ़ा, पिता के पास दो-पाँच हजार की पूँजी। अपने पास पाँच लाख, दस लाख, पच्चीस लाख (हो गये)। पुत्र अच्छे, मकान बनाये, दो-पाँच लाख के मकान, इज्जत, कीर्ति जमी। क्या जमा? धूल, ऐसा कहते हैं। धर्म का साधन तो तूने किया नहीं परन्तु आयुष्य जो पूर्व में पुण्य से लेकर आया, वह घटती जाती है और यह बढ़ता जाता है, यह तेरी तुझे गिनती किस प्रकार की? ऐसा कहते हैं। आहा..हा..! ऐई! ऐसा हो, वहाँ 'नाग्नेश' में भी पहिचानते थे। कहो, समझ में आया मोहनभाई?

पुण्य बाँधकर जो आयुष्य लेकर आया है, वह आयुष्य तो घटता जाता है। क्षण-क्षण में कम होता जाता है। तू कहता है कि यह बढ़ता जाता है। पाप करके यह सब इकट्ठा होता है उसमें। तेरी गिनती किस प्रकार की? धर्म तो एक ओर रहा, ऐसा यहाँ तो कहते हैं। समझ में आया? धर्म तो एक ओर रहा।

आत्मा ज्ञानानन्द शुद्ध चैतन्य, धर्मात्मा (कहते हैं) अन्तरस्वरूप के साधन करने के लिए मनुष्य देह है। यह भव, भव के अभाव के लिए भव है। समझ में आया? यह भव के अभाव के लिए कुछ करता नहीं परन्तु पूर्व के पुण्य के कारण जो आयुष्य लेकर आया ५०-६०-७०-७५, वह आयुष्य तो घटता जाता है और तू कहता है कि मैं बढ़ता हूँ। अब इसमें तेरी गिनती किस प्रकार की? हम बढ़े, पहले कहाँ था? अभी दस लाख हुए, पच्चीस लाख हुए। मलूपचन्दभाई जैसों के लड़के को करोड़-दो करोड़ हुए। धूल में भी कुछ नहीं हुआ। ऐई! हिम्मतभाई! क्या है यह?

मुमुक्षु : दोनों लड़के बढ़े, मलूपचन्दभाई कहाँ बढ़े?

पूज्य गुरुदेवश्री : ऐसा मैंने कहाँ कहा? इनके लड़के की मैंने बात की। मैंने ऐसा कहाँ कहा? मलूपचन्दभाई को कहा नहीं। कहो, समझ में आया? ये ऐसा माने कि अपने

देखो कहाँ थे ? बापू के पास कुछ नहीं था, कम था, थोड़ा बहुत हजार (था)। हमने बढ़ाया, अपनी इज्जत कितनी बढ़ी चारों ओर ! परन्तु यह पूर्व के पुण्य के कारण, आयुष्य के कारण आया वह आयुष्य तो घट गया। धर्म तो नहीं हुआ, तूने धर्म तो नहीं किया। आत्मा को राग और पुण्य-पाप से रहित आत्मा की श्रद्धा। आत्मा पुण्य-पाप के भावरहित है, ऐसी आत्मा की श्रद्धा, वह धर्म का साधन है, वह तो तूने किया नहीं परन्तु इस पूर्व के पुण्य के कारण आयुष्य लेकर आया, वह आयुष्य पुण्य का घटता जाता है और तू कहता है कि मैं बढ़ता हूँ। इसमें तेरी गिनती किस प्रकार की ? पोपटभाई ! आहा..हा.. ! तेरी गिनती अज्ञान की। तुझे गज / माप करना नहीं आता। कहो, जैचन्दभाई बराबर है यह ?

मुमुक्षु : सत्य बात है।

पूज्य गुरुदेवश्री : सत्य बात है यह कि, ऐ... मोहनभाई ! आहा..हा.. !

आयु क्षय धनवृद्धि को, कारण काल प्रमान। तू तो ऐसा कहता है कि मुझे बाहर की बढ़ा परन्तु आयुष्य का काल प्रमाण तो घटता जाता है और यहाँ तू कहता है कि बढ़ता जाता है प्रमाण मुझे। यह तेरा मेल किस प्रकार का। समझ में आया ? आहाहा ! ६०-७० वर्ष या जो कुछ लेकर आया हो। ६०-७० तो कितनों को होते हैं; नहीं तो कितने ही मर जाते हैं बेचारे ३०-४०-५० में चले जाते हैं। कहो, समझ में आया ? यह आयु तो जितना पूर्व का पुण्य था, उतना लेकर आया है। यह इस पुण्य के कारण आयुष्य इतना है। आयुष्य घटने लगा। तू कहता है मैं बढ़ने लगा। अब इसमें करना क्या ? पूर्व का पुण्य भी जो है, वह जलने लगा, आयुष्य घटने लगा। और पूर्व का पुण्य जो यह पैसा-वैसा बढ़ा, वह पुण्य भी जल गया। वह नोट इतना जल गया। तू कहता है कि बढ़ता हूँ। तेरी गिनती किस प्रकार की ? बराबर है न ? मलूपचन्दभाई ! दो पुण्य घटे और एक यहाँ बढ़ा, ऐसा तू मानता है। तेरी गिनती में अन्तर है, कहते हैं। आहा..हा.. ! पुण्य के पुण्य से आयुष्य मिला, वह आयुष्य घटता जाता है, पूर्व का पुण्य था, जो यह लक्ष्मी अनुकूल सब मिलना, वह पुण्य बाँधा हुआ था, वह घट गया, वह जल जाता है। तू कहता है कि मैं बढ़ा। यहाँ तो जला और घटा। उसमें तेरी गिनती किस प्रकार की है यह ? कहो, बराबर है। फावाभाई !

चाहत हैं धनवान धन,.. यह धनवान तो धन चाहे। धन शब्द से सब। पुत्र / लड़का, लक्ष्मी, इज्जत, कीर्ति। दस-दस लड़के, विवाह किया ठीक से और कैसे ऐसे

अच्छे घर में। हमारी पूँजी के समक्ष तो पाँच-पाँच, दस-दस लाख नहीं परन्तु पचास-पचास लाख, करोड़-करोड़ में विवाह किया है और कुछ अन्तर पड़े तो उसका ससुर भी उसे मदद करके खड़ा रखे ऐसा है। ऐई!

मुमुक्षु : सहारा है।

पूज्य गुरुदेवश्री : उसे बड़ा सहारा है। परन्तु किसका सहारा? तेरा यह पुण्य जल गया, किसका सहारा तू मानता है? आयुष्य घटता जाता है, पूर्व का पुण्य जलता जाता है। पुण्य बाँधा हुआ। यह सब बाहर की सामग्री मिले और पुण्य बढ़ता जाता है। पुण्य जलता जाता है अन्दर में और तू कहता है कि मैं बढ़ा हूँ। तेरी इस प्रकार की कैसी गिनती है? धर्म का साधन तो किया नहीं परन्तु पुण्य के ठिकाने में भी तेरा ठिकाना नहीं। नया पाप बाँधे, पुण्य जल जाये, आयुष्य घटता जाये और तू कहता है कि बढ़ा। यह तेरी कैसी गिनती? बराबर जमुभाई!

मुमुक्षु : बाहर की...

पूज्य गुरुदेवश्री : क्या दिखता है? धूल। यह कहेंगे। दिखता है। सोजा दिखता है सब सोजा (सूजन)।

प्राणनिते अधिकान। समझे न? **चाहत हैं धनवान प्राणनिते..** प्राण अधिक हैं, इतना पाठ। कहो, यह श्लोक १५वीं गाथा का था। अन्त में था न? **धनियों को जीवन (प्राणों) की अपेक्षा धन ज्यादा अच्छा लगता है।** है न? अपने आयुष्य की अपेक्षा भी लक्ष्मी, पुत्र, बहुत प्रिय लगता है। बापू! मुझे भले हो। भाई! परन्तु अब लक्ष्मी तू पैदा करता हो न, तो बहुत अच्छा। यदि तू लक्ष्मी पैदा करता हो तो मुझे सन्तोष है। मूढ़ है न! मुझे भले रोग हो और मुझे भले प्रतिकूलता हो परन्तु तू आमदनी करता हो और तुझे ठीक हो तो मुझे बहुत ठीक है - ऐसा मानता है या नहीं? अपने जीवन से भी **धनियों को जीवन (प्राणों) की अपेक्षा धन ज्यादा अच्छा लगता है।** स्त्री, कुटुम्ब बहुत अच्छा लगता है कि यह ठीक... यह ठीक.. यह ठीक.. यह व्यामोह है। यह व्यामोह है, तेरी मूढ़ता है। ऐसे व्यामोह को धिक्कार हो। कहो, बराबर होगा? मोहनभाई! पैसेवाले को सबको खड़ा करे न जरा-सा।

मुमुक्षु : .....

पूज्य गुरुदेवश्री : अनादि का ऐसा का ऐसा है। ऐसी की ऐसी मूढ़ता ही करता आया है अनन्त काल से। धर्म साधन तो किया नहीं परन्तु पुण्य लेकर आया, उसे उतनेरूप से रखा नहीं और पाप बढ़ाया और बाहर का मिला, उस वृद्धि में आयुष्य घटा और पुण्य घटा तो तू कहता है बढ़ा। तेरी गिनती में अन्तर है। गिनती में बहुत अन्तर, तेरे गज के माप में ही अन्तर है, कहते हैं। यह इष्टोपदेश है। समझ में आया? अब शिष्य ने प्रश्न किया।

यहाँ पर शिष्य का कहना है कि धन जिससे पुण्य का उपार्जन किया जाता है, वह निंद्य–निंदा के योग्य क्यों है? पात्रों को दान देना, देव की पूजा करना, आदि क्रियायें पुण्य की कारण हैं, वे सब धन के बिना हो नहीं सकती। इसलिए पुण्य का साधनरूप धन निंद्य क्यों? वह तो प्रशंसनीय ही है। इसलिए जैसे बने वैसे धन को कमाकर पात्रादिकों में देकर सुख के लिये पुण्य संचय करना चाहिये। इस विषय में आचार्य कहते हैं –

त्यागाय श्रेयसे वित्तमवित्तः संचिनोति यः।
स्वशरीरं स पंकेन स्नास्यामीति विलिम्पति।।१६।।

अर्थ – जो निर्धन, पुण्य प्राप्ति होगी इसिलए दान करने के लिये धन कमाता या जोड़ता है, वह 'स्नान कर लूँगा' ऐसा ख्याल से अपने शरीर को कीचड़ में लपेटता है।

अर्थ – जो निर्धन ऐसा ख्याल करे कि 'पात्रदान, देवपूजा आदि करने से नवीन पुण्य की प्राप्ति और पूर्वोपार्जित पाप की हानि होगी, इसलिए पात्रदानादि करने के लिये धन कमाना चाहिये', नौकरी खेती आदि करके धन कमाता है, समझना चाहिये कि वह 'स्नान कर डालूँगा' ऐसा विचार कर अपने शरीर को कीचड़ से लिप्त करता है। खुलासा यह है कि जैसे कोई आदमी अपने निर्मल अंग को 'स्नान कर लूँगा' का ख्याल कर कीचड़ से लिप्त कर डाले, तो वह बेवकूफ ही गिना जायेगा। उसी तरह पाप के द्वारा पहिले धन कमा लिया जाय, पीछे पात्रदानादिके पुण्य से उसे नष्ट कर डालूँगा, ऐसे ख्याल से धन के कमाने में लगा हुआ व्यक्ति भी समझना चाहिये। संस्कृतटीका में यह

भी लिखा हुआ है कि चक्रवर्ती आदिकों की तरह जिसको बिना यत्न किये हुए धन की प्राप्ति हो जाय तो वह उस धन से कल्याण के लिये पात्रदानादिक करे तो करे।

फिर किसी को भी धन का उपार्जन, शुद्ध वृत्ति से हो भी नहीं सकता जैसा कि श्री गुणभद्राचार्य ने आत्मानुशासन में कहा है – 'शुद्धैर्धनैर्विवर्धन्ते०'

अर्थ – 'सत्पुरुषों की सम्पत्तियाँ, शुद्ध ही शुद्ध धन से बढ़ती हैं, यह बात नहीं है। देखो, नदियाँ स्वच्छ जल से ही परिपूर्ण नहीं हुआ करती हैं। वर्षा में गँदले पानी से भी भरी रहती हैं'।।१६।।

दोहा – पुण्य हेतु दानादिको, निर्धन धन संचेय।
स्नान हेतु निज तन कुधी, कीचड़ से लिम्पेय।।१६।।

गाथा - १६ पर प्रवचन

यहाँ पर शिष्य का कहना है कि धन जिससे पुण्य का उपार्जन किया जाता है,.. महाराज! आप धन की इतनी अधिक निन्दा करते हो, शिष्य कहता है परन्तु **जिससे पुण्य का उपार्जन..** पैसे होवे तो पुण्य हो, पैसा होवे तो दान किया जाये, देव भक्ति की जाये, पूजा की जाये, यह सब किया जाये। पैसे के बिना क्या करना? तुमने यह सब क्या लगायी है? **धन जिससे पुण्य का उपार्जन किया..** इतना विशेष कहता है, हों! कि धन से धर्म होता है, ऐसा नहीं कहता। इतनी तो वह मर्यादा रखता है। आहा..हा..! समझ में आया? धन से कहीं धर्म होता है, ऐसा तो नहीं कहता। परन्तु महाराज! यह पाँच-पच्चीस लाख धन-वन हो तो पुण्य करें। **वह निंद्य-निंदा के योग्य क्यों है?** ऐसी निन्दा के योग्य आप क्यों कहते हो? **पात्रों को दान देना,..** महासाधु, महापात्र हो, अपने पास लक्ष्मी हो तो दान दें, लक्ष्मी हो तो दान दे दें और उस लक्ष्मी की आप निन्दा करते हो, ठीक लगायी है न तुमने सब? यह वहाँ ऊँचा हो, ऐसा नहीं है। **पात्रों को दान देना,..** समझे? अच्छा कोई गरीब व्यक्ति हो, उसे करुणा से दान देना; साधु-धर्मात्मा हो, उसे दान दें। पैसा होवे तो दान दिया जाये, पैसे बिना क्या दिया जाये? शिष्य कहता है। और उस पैसे की आप निन्दा करते हो। **देव की पूजा करना,..** यह मन्दिर बनाया जाये, भक्ति की जाये,

पूजा की जाये, प्रभावना की जाये, पाँच-दस लाख खर्च करके बड़े मन्दिर, बड़ी रथयात्रा, हाथी निकले। क्या कहलाता है वह ? गजरथ, गजरथ। कहो ! ऐसा निकले। पैसा होवे तो यह सब होता है। तुम तो कहते हो पैसा खोटा, पैसा खोटा। कहाँ बढ़ेगा ? तुम्हारे पैसा खोटा करना है। न्यालभाई ! देव की पूजा हो, लो ! भगवान की पूजा हो। साधारण दूसरा करता हो और बड़ी-बड़ी पूजा (कर) मणिरत्न के दीपक और ऐसे बड़े भण्डार और चाँदी के चारों ओर... समझे न रखे। भगवान के पीछे ऐसे, ऐसे.. ओहो..हो.. ! पाँच-पाँच लाख रुपये खर्च करे। चौदह लाख खर्च किये, देखो ! अभी लाडनूँ में। गजराज, गजराज के पिता के नाम के चौदह लाख, एक मन्दिर। चौदह लाख से अधिक खर्च किये हैं। वह गजराज नहीं ? यह बच्छराजजी, बच्छराजजी, गजराजजी तीनों भाईयों के बीच उनके पिता का नाम, पिता के नाम का बड़ा मन्दिर, पन्द्रह लाख-सोलह लाख का बनायेंगे। यह अभी (संवत्) २०१६ के वर्ष में।

पैसे थे। अब थे क्या ? अभी बेचारे कैद में पड़े हैं। गजराज और उनका लड़क अभी कैद में पड़ा है। कब छूटेगा, उसका मेल नहीं अभी। राज का गुनाह हुआ है। ऐसा मानते हैं। करोड़पति व्यक्ति है। बीस-बीस वर्ष पहले कितने ही आये, अब अभी क्या ? आहा..हा.. ! कहते हैं पिता, पुत्र को एक जगह नहीं। कैद में पिता अलग और लड़का अलग। ये करोड़पति व्यक्ति। क्या करे ? यहाँ पाप का उदय आयेगा, इसलिए ऐसा होगा, कहते हैं। यह तेरा कायम नहीं रहेगा। तू माने कि मेरे पुण्य के उदय का ठाठ है परन्तु वह सन्ध्या का राग है। सब बिखर जायेगा एकदम, कुछ नहीं रहेगा। व्यर्थ में किसका इसके विश्वास से रहता है ? ऐसा कहते हैं। समझ में आया ? आहा..हा.. !

महाराज ! लक्ष्मी की इतनी अधिक निन्दा रहने दो। पात्र को दान दिया जाये, देव की पूजा हो, साधर्मी को जीमाया जाये, संघ जीमाया जाये, ऐई.. ! मलूपचन्दभाई ! आदि शब्द हैं या नहीं ? भक्ति की जाये, बड़ी रथयात्रा निकले, और पाँच-पच्चीस लाख खर्च करके बड़ी शोभा प्रभावना... प्रभावना.. ऐसे निकले। देखो ! पैसा होगा तो अहमदाबाद में मन्दिर होगा। समझे न ? अच्छे में अच्छा मन्दिर बनाना, ऐसा और रामजीभाई कहते हैं, लो ! पैसा होवे तो हो ? तुम पैसे की निन्दा करने लगे और पैसे बिना ये सब होता नहीं और उससे हमें पुण्य होता है। यह सब तुमने क्या लगायी है ?

आदि क्रियायें पुण्य की कारण हैं,.. अरे! कोई धर्मी करता हो, उसे अपने प्रभावना करें, पताशा बाँटें, शाकर बाँटे, रुपया दें, कोई धर्मात्मा बेचारा धर्म करता हो तो जाओ दो-दो, पाँच-पाँच हजार तुमको प्रभावना देते हैं, करो। पैसा होवे तो पुण्य होता है या उसके बिना होता होगा?

मुमुक्षु : .....

पूज्य गुरुदेवश्री : परन्तु यहाँ है या नहीं इसमें? देखो! आदि है या नहीं? इस आदि में सब बहुत समाहित है। गरीब मनुष्यों को वस्त्र दिया जाये, गरीब को अनाज दिया जाये, पैसा होवे तो दिया जाये। कहो, समझ में आया? ऐई! पैसे के बिना क्या करना? कहो। परन्तु शिष्य ने इतना कहा है कि यह पैसा हो तो पुण्य हो। पैसे से धर्म हो इतना तो प्रश्न नहीं किया। धर्म तो आत्मा से होता है, पैसे से नहीं होता। समझ में आया? इतना तो शिष्य जरा अभी ख्यालवाला है।

वे सब धन के बिना हो नहीं सकती। महाराज! वह पैसे के बिना हो? कहो! देखो न! अड़ा रहता है या नहीं? वहाँ अभी तीन-तीन वर्ष हो गये उसके मुहूर्त को, तथापि अभी शुरु नहीं होता। पैसे के बिना है यह सब? दरकार नहीं की, दूसरे काम में कैसे पैसे खर्च करते हैं? ऐई! **इसलिए पुण्य का साधनरूप धन निंद्य क्यों?** वह तो पुण्य का साधन है। लक्ष्मी होवे तो पुण्य हो, ऐसे दान हो, भक्ति हो, मन्दिर बनाये जायें। समझ में आया? स्वाध्यायमन्दिर हो, लो! ब्रह्मचारी बहिनों के लिये रहने का स्थान हो। उन्हें आजीविका दी जाये, पैसा होवे तो दी जाये। पैसे के बिना.. तुम कहते हो कि ऐसा पैसा निन्द्य है.. निन्द्य है.. निन्द्य है..।

पुण्य का साधनरूप धन निंद्य क्यों? वह तो प्रशंसनीय ही है। ये सब कार्य तो प्रशंसनीय है और ये कार्य धन के द्वारा होते हैं, तो धन की निन्दा किसलिए (करते हो)? धन की प्रशंसा करो। ऐई! **इसलिए जैसे बने वैसे धन को कमाकर..** जैसे बने, वैसे धन को कमाकर **पात्रादिकों में देकर सुख के लिये पुण्य संचय करना चाहिये।** भविष्य में स्वर्ग आदि मिले, धूल मिले आदि। इसके लिये यह पुण्य संचय करना, ऐसा शिष्य कहता है। **इस विषय में आचार्य कहते हैं..** सुन। अब इसका उत्तर देते हैं।

त्यागाय श्रेयसे वित्तमवित्तः संचिनोति यः।
स्वशरीरं स पंकेन स्नास्यामीति विलिम्पति।।१६।।

अर्थ – जो निर्धन,.. पहले पैसा नहीं है। अब **पुण्य प्राप्ति होगी इसलिए दान करने के लिये..** अपने दान करना है। दान करने के लिये **धन कमाता है,..** दान करने के लिये पैसा कमाता है। दान करने के लिये, पूजा करने के लिये, मन्दिर बनाने के लिये **धन कमाता या जोड़ता है,..** इकट्ठा करता है। इकट्ठा करो तो एक साथ में दान में काम आयेंगे। **वह 'स्नान कर लूँगा' ऐसा ख्याल से अपने शरीर को कीचड़ में लपेटता है।** बाद में स्नान कर लूँगा, पहले कीचड़ में लपेट आऊँ। कीचड़ से शरीर को मलिन करूँ। पहले मलिन करूँ, फिर मैं स्नान कर लूँगा। ऐसे धन कमाऊँ, वह तो मलिन शरीर और पाप करने जैसा है। धन कमाने का भाव ही पाप है। पाप के बिना धन कभी कमाता नहीं। तो मलिन शरीर करके और फिर स्नान करके पुण्यक्रिया करेगा। समझ में आया न? बाद में पैसा मिलेगा तो आँखें चढ़ जायेगी दूसरे (रास्ते)। समझ में आया? और दस लाख रुपया होवे तो उसके बाद पाँच-दस हजार खर्च करे, वहाँ तो ओहो..हो..! बहुत खर्च किया। क्या धूल खर्च की अब तूने? वापस वही हो जायेगा। समझ में आया?

मुमुक्षु : .....

पूज्य गुरुदेवश्री : फिर लक्ष्मी का मद चढ़ जाये। पूर्व का पाप है या नहीं? पाप के कारण अन्दर अभिमान है। ऐसा पुण्य किया हुआ-पापानुबन्धी पुण्य कि उस पुण्य में जो यहाँ मिला, वहाँ अभिमान हो जाये। आहा..हा..! हमने किया। देखो! पुण्य करते हैं। दूसरे को कहा करता है। हम पुण्य करते हैं, देखो! पुण्यवान की पहली कुर्सी। हम होवें तो धर्म शोभे। पुण्यवाले के कारण धर्म शोभता है, परन्तु निर्धन से क्या शोभता था? ऐई! ऐसे अज्ञानी को अभिमान होता है। अब लक्ष्मीवाले करोड़पति, उन्हें सामने बुलावे, लो! साधु महाराज भी बुलावे। आओ, आओ, भाई! आओ-आओ। लाख-दो लाख निकालोगे तो और... आओ-आओ, भाई! लिखाओ इसमें लिखाओ। तुम तुम्हारी शक्तिप्रमाण लिखाओ। महाराज बुलावे, इसलिए शक्तिप्रमाण लिखाना ही पड़े। कहो, समझ में आया इसमें? कहते हैं, परन्तु कमाने का भाव, वही पाप है। अब सुन न! लक्ष्मी कमाने का भाव ही, धन्धा-व्यापार करना, वही पाप है। आहा..हा..!

मुमुक्षु : हेतु में अन्तर है।

पूज्य गुरुदेवश्री : हेतु में अन्तर, पाप का अन्तर। क्या हेतु ? धूल का अन्तर है ? फिर पुण्य करेगा, ऐसा हेतु में अन्तर है। गाय मारकर कुत्ता धरने जैसा है। ऐसा कहते हैं। समझ में आया ?

ऐसा ख्याल से अपने शरीर को कीचड़ में लपेटता है। वह मूर्ख है, ऐसा कहते हैं। बड़ा मूर्ख है। आहा..हा.. ! पाप करूँ पैसे के लिये, कमाऊँ, फिर अपने देव-पूजा और भक्ति में पुण्य करेंगे। बड़ा मूर्ख है। कहेंगे थोड़ा। पहले पैसा-वैसा पूर्व पुण्य से सहज मिल गये हों और उसमें कोई दया, दान, भक्ति, पूजा में खर्च करे तो पुण्यभाव हो, धर्म नहीं; धर्म तो नहीं। आहा..हा.. ! समझ में आया ? देव पूजा या दान आदि में धर्म तो नहीं। पूर्व पुण्य से मिले, सहज मिल गये। कमाऊँ और उससे फिर करेंगे, ऐसा नहीं। पुण्य से मिल गये तो उसमें से राग घटाकर पूजा, देवभक्ति, दया, दान में ऐसी प्रभावना करे तो वह पुण्य नया होता है। समझ में आया ? परन्तु उसके हेतु से कमावे तो पाप होता है। पूरे इस शरीर को कीचड़ में लगाता है, बाद में स्नान करूँगा। कब इसका अन्त आयेगा ? और वह भी वापस लक्ष्मी होने के बाद भी आँखें दूसरी ओर जायेंगी। ज्यादा होगी इसलिए। उसका खर्च करने का अमुक ही स्थिति का भाव होगा। समझ में आया ? दस लाख में भी हम हमेशा भी ऐसे खर्च करते हैं, हजार, दो हजार, बारह महीने हमेशा खर्च करते हैं। हजार-दो हजार... पाप कितना करता है ? उसमें तेरे हजार-दो हजार क्या हैं ? समझ में आया ? एक बार पाँच हजार दिये हों तो बस हो गया। ओहो..हो.. ! क्या हुआ परन्तु अब ? हमेशा पाप करता है न ! प्रतिदिन का तेरा पाप। कर टोटल बारह महीने का। बराबर होगा यह ?

विशदार्थ – जो निर्धन ऐसा ख्याल करे कि पात्रदान, देवपूजा.. महाराज ने लिया है तो बहुत सरस। देखो ! अच्छे पात्र को दान दें, उनका आशीर्वाद मिले, अपने को पुण्य हो, ऐसा करते-करते फिर परम्परा से धर्म भी हो। देव-पूजा करें, भक्ति करें, प्रभावना करें, शोभायात्रा निकालें, वर्षीतप का उद्यापन करें, लो ! यह लोगों को होता है न ? वर्षीतप इसमें तो नहीं। **आदि करने से नवीन पुण्य की प्राप्ति और पूर्वोपार्जित पाप की हानि होगी,..** देखो ! शिष्य कहता है, शिष्य प्रश्न करता है। निर्धन ऐसा ख्याल करे... उत्तर देते

हैं। **'पात्रदान, देवपूजा आदि करने से नवीन पुण्य की प्राप्ति और पूर्वोपार्जित पाप की हानि होगी, इसलिए पात्रदानादि करने के लिये धन कमाना चाहिये'..** ऐसा शिष्य कहता है। अपनी अभिलाषा बाहर रखता है।

नौकरी खेती आदि करके धन कमाता है,.. लो! नौकरी में भी पाप है, खेती में भी पाप है, धन्धे में क्षण-क्षण में पाप है। कोई भी धन्धा (होवे)। पाप का धन्धा होगा या उसमें कुछ होता होगा?

मुमुक्षु : .....

पूज्य गुरुदेवश्री : कौन सा पाप निस्वार्थ? कपड़े का है न यह? कपड़े का। यह ममता है न तेरी? समझे नहीं। ऐसा करूँ और पाँच लाख रखूँ और फिर ऐसे खर्च हो और ऐसे हो। सब पाप ही है। यह छापाखाने में निष्पापी पाप होगा या नहीं धन्धा? जमुभाई! वह पाप है। कमाने का भाव ही पाप है। दुकान पर बैठकर कमाना, वही पाप है। नया वापस दूसरा क्या है? आहा..हा..!

मुमुक्षु : लड़के को पढ़ाने का?

पूज्य गुरुदेवश्री : पढ़ाने का भाव पाप है। पढ़ाने में क्या है वहाँ? पाप करेगा और फिर यह करेगा। सब पाप ही भाव है। यह अच्छा करेगा और लड़का करेगा और लड़के का विवाह करना और उसे फिर... समझे न? दो-पाँच हजार चुपचाप देना और फिर यह तुझे देख इतना खर्च करने की छूट। सब पाप है। समझ में आया?

नौकरी खेती आदि करके धन कमाता है, समझना चाहिये कि वह 'स्नान कर डालूँगा' ऐसा विचार कर अपने शरीर को कीचड़ से लिप्त करता है। कीचड़ लपेटता है, चिकना कीचड़।

मुमुक्षु : फिर तो नहाये न वापस?

पूज्य गुरुदेवश्री : फिर नहीं नहाये। मर जायेगा उसी और उसी में। यह विचारता रहता है, वह मूर्ख है, कहते हैं।

खुलासा यह है कि जैसे कोई आदमी अपने निर्मल अंग को 'स्नान कर

लूँगा'.. निर्मल अंग को पहले मैल लगाता है, फिर स्नान करूँगा। **का ख्याल कर कीचड़ से लिप्त कर डाले,..** कीचड़ / कादव से शरीर को मैला करे। **तो वह बेवकूफ ही गिना जायेगा। उसी तरह पाप के द्वारा पहिले धन कमा लिया जाय, पीछे पात्रदानादि के पुण्य से उसे नष्ट कर डालूँगा, ऐसे ख्याल से धन के कमाने में लगा हुआ व्यक्ति भी (बेवकूफ) समझना चाहिये।** ऐसा कहते हैं। उसके साथ कहा न? **व्यक्ति भी...** उसके लिये जानूँ, जानूँ, वह भी बेवकूफ है। आहा..हा..! बहुत ऐसे होते हैं, हमारे पाँच लाख की बन्धी तो है परन्तु अब बढ़े न, वह सब दान में खर्च करूँगा परन्तु धन्धा क्या करने लगा तू यह पाप का? पाँच लाख से हमारे अधिक चलता नहीं, परन्तु जितना अधिक आवे, वह दान में डाल देते हैं, दान में डाल देते हैं। अरे! परन्तु चलता नहीं और यह पाप करके खर्च करे, वह तेरी पद्धति ही खोटी है। समझ में आया? ऐसा होता है या नहीं? धर्मचन्दजी! हाँ, हाँ ऐसा होता है। हमारे यहाँ... इतना सब बहुत सुना हुआ है। बहुत जगह कितने में होता है कि अपने बन्धी तो इतनी है तो अब व्यापार बढ़ गया, आमदनी बढ़ गयी। करना क्या?

मुमुक्षु : महिलाओं के नाम से कर देते हैं।

पूज्य गुरुदेवश्री : महिलाओं के नाम से करे, वह तो ठीक। तुम्हारे तो महिला मर गयी है। उसके नाम से करे, लड़के के नाम से करे, भाग कर दे, ऐसा करके हमारे तो भई पच्चीस हजार से अधिक नहीं चलता परन्तु यह लाख-लाख की आमदनी बढ़ गयी, इसलिए लड़के के नाम से खर्च कर डालते हैं, बारह महीने में खर्च कर डालते हैं। परन्तु पाप करके धन्धा करना, वह तेरा पाप है। समझ में आया?

मुमुक्षु : डॉक्टर का धन्धा और वकील का धन्धा अच्छा न?

पूज्य गुरुदेवश्री : डॉक्टर, वकील का भी बड़ा पाप है। यह पहले रखते। साठ रख पहले। कहेंगे। चालीस-चालीस रख पहले, एक घण्टे / साठ मिनिट के, फिर बात करूँगा। पाप होगा या क्या होगा यह? इसकी गरज उसे, और इसे पाप। उसकी इसे गरज पैसा देने की, उसे गरज परन्तु इसे भाव क्या (है)?

मुमुक्षु : .....

पूज्य गुरुदेवश्री : भले वह न कहे, परन्तु मुझे बात करनी है, तुझे जैसे... परन्तु यह भाव किसका है ? कमाने का भाव है या पाप का भाव है या पुण्य का भाव है ? पाप का। लड़के को पढ़ाने का भाव कौन सा होगा ? यह मास्टर पढ़ाता है वह ? सब पाप ?

बेवकूफ ही गिना जायेगा। उसी तरह पाप के द्वारा पहिले धन कमा लिया जाय,.. पाप से धन कमाऊँ, फिर **पीछे पात्रदानादिके पुण्य से उसे नष्ट कर डालूँगा, ऐसे ख्याल से धन के कमाने में लगा हुआ व्यक्ति भी समझना चाहिये।** लो ! **संस्कृत टीका में यह भी लिखा हुआ है..** लिखा है **'यस्य तु चक्रवर्त्यादे'** आदि है न ? **कि चक्रवर्ती आदिकों की तरह..** चक्रवर्ती होता है न ? महाबलदेव आदि चक्रवर्ती। पूर्व के पुण्य से ढेर आ गया उसे। उन लोगों को कमाना नहीं पड़ता, बहुत पुण्य। पूर्व का इतना पुण्य हो, ढेर ! एक-एक दिन की अरबों की आमदनी। इतने तो चक्रवर्ती के घर में नवनिधान होते हैं। कहते हैं, ऐसी लक्ष्मी आदि कोई पूर्व के पुण्य के कारण मिल गयी, दूसरे करोड़ोंपति या उसे भी... **जिसको बिना यत्न किये..** पुरुषार्थ कुछ किया न हो या इकलौता वारिस ऐसा मिल गया या कहीं से भण्डार मिल गया। समझ में आया ? पाँच-पच्चीस लाख के हीरे निकल गये, कहीं सोना निकल गया। दबा पड़ा हो, वह पुण्य के कारण निकल गया, तो कहते हैं, उस **धन की प्राप्ति हो जाय तो वह उस धन से कल्याण के लिये पात्रदानादिक करे तो करे।** उस पैसे को पुण्य के लिये (खर्च करे)। कल्याण शब्द से यहाँ पुण्य है। पुण्य के लिये पात्रदानादि करे तो करो। पूर्व के पुण्य से सहज लक्ष्मी मिल गयी हो और उसमें से फिर तुझे दान-पुण्य के लिये करना हो तो बाहर राग घटा, परन्तु पाप करके कमाऊँ और फिर दान करना, यह धन्धा सच्चा नहीं है। यह पुण्य का भी सच्चा नहीं है। धर्म का तो है नहीं।

मुमुक्षु : दान करे, उसकी अपेक्षा पात्रदान करे....

पूज्य गुरुदेवश्री : यह खोटा, यह ही खोटा है, ऐसा कहते हैं। पाप करके दान करना, उसका क्या अर्थ ? पहले पाप करना ही खोटा है। फिर दान करने का भाव वापस रहेगा या नहीं ? मरने से पहले क्या होगा, इसकी क्या खबर इसे ? समझ में आया ? पहले जहर खा लूँ, फिर मैं जीवित रहूँगा तो अमुक काम करूँगा, इसका अर्थ क्या है ? समझ में आया ? यहाँ तो इष्टोपदेश यह है। लक्ष्मी मिली हो पूर्व के पुण्य के कारण अधिक पाप

बिना सहज मिल गयी हो। बहुतों को मिल जाती है न ऐसी ? उत्तराधिकार मिल जाये तो कहते हैं, उसमें से दान-पुण्य आदि में खर्च। राग घटे, उतना पुण्य होगा; धर्म-वर्म तो नहीं। पूजा, भक्ति, मन्दिर बनाना, दान करना, दया करना, वह कहीं धर्म तो नहीं है।

मुमुक्षु : वह पुण्य तो...

पूज्य गुरुदेवश्री : वह पुण्य है। आहा..हा..! समझ में आया ? धर्म तो आत्मा में पुण्य-पाप के राग बिना चैतन्य शुद्ध आनन्द की दृष्टि और ज्ञान करना, उसका नाम धर्म है। आहा..हा..! समझ में आया ? कहाँ स्थापित करते हैं अभी ? उस पुण्य की बात में ही यह है।

फिर किसी को भी धन का उपार्जन, शुद्ध वृत्ति से हो भी नहीं सकता.. देखो! क्या कहते हैं ? लक्ष्मी का उपार्जन शुद्धभाव से होता ही नहीं, पापभाव से ही होता है, ऐसा कहते हैं। कोई भी व्यक्ति ऐसा दावा करे कि यह लक्ष्मी मैंने अच्छे भाव से की है, वह तेरा दावा मिथ्या है। लक्ष्मी का कमाना ही पाप है, ऐसा कहते हैं। समझ में आया ? हमारी नीति हेतु दूसरा था, हमारा कमाने का हेतु दूसरा था, हमारी नैतिक जिन्दगी में जीना, ऐसा हेतु था, अमुक था। कहते हैं या नहीं ? समझ में आया ? **धन का उपार्जन,..** ऐसे स्त्री, पुत्र, परिवार सबका, हों! **शुद्ध वृत्ति से हो भी नहीं सकता जैसा कि श्री गुणभद्राचार्य ने आत्मानुशासन में कहा है – 'शुद्धैर्धनैर्विवर्धन्ते०'**

अर्थ – सत्पुरुषों की सम्पत्तियाँ, शुद्ध ही शुद्ध धन से बढ़ती हैं, यह बात नहीं है। देखो! धर्मात्मा जीव को भी लक्ष्मी बढ़े, वह पाप से बढ़ती है, पुण्य से नहीं। पुण्यभाव से नहीं। अच्छा भाव है पुण्य और पैसा मिला है, ऐसा है ? आहा..हा..! **सत्पुरुषों की सम्पत्तियाँ, शुद्ध ही शुद्ध धन से बढ़ती हैं, यह बात नहीं है। देखो, नदियाँ स्वच्छ जल से ही परिपूर्ण नहीं हुआ करती हैं।** क्या कहते हैं ? चातुर्मास में चारों ओर गन्दा पानी भरे, तब नदी भरती है। मात्र उज्ज्वल पानी से, हल्के पानी से, स्वच्छ पानी से नदी नहीं भरती, ऐसा कहते हैं। नदी आवे न ? चातुर्मास में वर्षा चारों ओर (होवे तब)। हमने तो नदी बहुत देखी है न कालूभार में। ऐसा पानी बाँस, दो-दो बाँस, हों! चारों ओर का पानी भी गन्दा। उस गन्दे पानी से नदी भरती है, कहीं स्वच्छ पानी अच्छा पानी से

आकर नदी भरती है पहले, ऐसा नहीं है। इसी प्रकार पैसा पाप से पैदा होता है, ऐसा कहते हैं। कालीदासभाई!

ये कालीदासभाई कहते थे कि कोई ऐसा कहता है कि अभी एकदम पच्चीस-पचास लाख के आसामी हो गये और सीधे पुण्य से हो गये, माया-वाया, काला बाजार किये बिना, तो ऐसा अभी नहीं है। ये लक्ष्मी बढ़ गयी। किसी को हो साधारण, दो-चार लाख हो, वह अलग बात परन्तु एकदम पच्चीस-पचास लाख हो गये और हमने हमारे धन्धे से किये। अन्दर काला बाजार और कोई गड़बड़ हो, तब होता है। पाँच-पच्चीस हजार की आमदनी हमेशा हो और दो-पाँच लाख, दस लाख हो गये, वह अलग बात है परन्तु एकदम हो गये पचास लाख, करोड़, दो वर्ष में! कुछ घोटाला होगा अन्दर।

मुमुक्षु : .....

पूज्य गुरुदेवश्री : पुण्य इकट्ठा नहीं, जल गया पुण्य। उसे बाहर के कोई कपट प्रपंच थे, ऐसा कहते हैं। कोई चोरी की हो, कर चोरी की हो, कोई काला बाजार हो या कुछ हो, गुप्त हो, नामा की बहियाँ बदली हों, कुछ तो गड़बड़ हो तब बढ़े, ऐसा कहते हैं। कालीदासभाई! यह तो कहते हैं, गौण करना। तेरे पाप के लिये कर गौण तू। किसी को लक्ष्मी पाप बिना इकट्ठी होती है, यह बात है ही नहीं। नदी गन्दे पानी के बिना अकेले अच्छे पानी से दोनों किनारे भरें, ऐसा होता नहीं - ऐसा कहते हैं। यह बराबर है? दृष्टान्त बहुत सरस दिया है। नदी में दो पूर आवे न पानी? वह अच्छे पानी से आते होंगे कहीं से?

स्वच्छ पानी कहाँ था वहाँ ऊपर? बरसात का (आवे) न, सब गन्दा इकट्ठा होकर, ऐसा होकर ऐसे दोनों किनारे उछलें, मैला पानी हो। आहा..हा..! **नदियाँ स्वच्छ जल से ही परिपूर्ण नहीं हुआ करती हैं।** आचार्य ने दृष्टान्त भी कैसा दिया है! समझ में आया? आत्मानुशासन है, हों! **वर्षा में गँदले पानी से भी भरी रहती हैं।** देखो! वर्षाकाल में दोनों किनारे नदी भरती है, वह मलिन पानी से भरती है। सब मैला चारों ओर से इकट्ठा होवे न! सब मैला। पानी-पानी सब मैला हो। वह कहीं तुरन्त छानकर पीया नहीं जा सकता, ऐसा पानी होता है। दृष्टान्त वर्षाकाल का दिया, हों! यों ही बरसात कहाँ से आवे? बरसे बिना तो। **वर्षा में गँदले पानी से भी भरी रहती हैं।** अच्छे पानी से नदी भरती नहीं; वैसे

जगत के पैसे अच्छे पुण्य से इकट्ठे हों अर्थात् अच्छे भाव से इकट्ठे हों नहीं, पापभाव से ही इकट्ठे होते हैं। बराबर होगा?

दोहा – पुण्य हेतु दानादिको, निर्धन धन संचेय।
स्नान हेतु निज तन कुधी, कीचड़ से लिम्पेय।।१६।।

पुण्य हेतु दानादिको,.. पुण्य के लिये, दान के लिये, पूजा-भक्ति के लिये, निर्धन धन का संचय करे, लक्ष्मी इकट्ठी करे, **स्नान हेतु निज तन कुधी,..** जिसकी बुद्धि भ्रष्ट है, ऐसे तन को मैला करके फिर स्नान कर लूँगा, ऐसे कीचड़ से लपेटता है, ऐसी वह बुद्धि / कुबुद्धि है। आहा..हा..! समझ में आया? यहाँ तो दान-पूजा के लिये भी तू पाप करके कर, इसका निषेध (करते हैं)। दान, पूजा है, वह तो पुण्यभाव है, वर्तमान करे वह; और धर्म तो इन दान, पूजा के भाव और कमाने के पापभाव से रहित आत्मा की श्रद्धा, ज्ञान करे तो धर्म होता है। इसके अतिरिक्त धर्म-बर्म है नहीं। आहा..हा..! समझ में आया? १६ (गाथा पूरी) हुई।

उत्थानिका – फिर शिष्य कहता है कि भगवन्! धन के कमाने में यदि ज्यादातर पाप होता है, और दु:ख का कारण होने से धन निंद्य है, तो धन के बिना भोग और उपभोग भी नहीं हो सकते, इसलिए उनके लिये धन होना ही चाहिए, और इस तरह धन प्रशंसनीय माना जाना चाहिए। इस विषय में आचार्य कहते हैं कि 'यह बात भी नहीं है' अर्थात् 'पुण्य का कारण होने से धन प्रशंसनीय है,' यह जो तुमने कहा था, सो वैसा ख्याल कर धन कमाना उचित नहीं, यह पहिले ही बताया जा चुका है। 'भोग और उपभोग के लिये धन साधन है,' वह जो तुम कह रहे हो। सो भी बात नहीं है, यदि कहो क्यों? तो उसके लिये कहते हैं –

आरंभे तापकान्प्राप्तावतृप्तिप्रतिपादकान्।
अंते सुदुस्त्यजान कामं कामान् कः सेवते सुधीः।।१७।।

अर्थ – आरम्भ में सन्ताप के कारण और प्राप्त होने पर अतृप्ति के करनेवाले तथा

अन्त में जो बड़ी मुश्किलों से भी छोड़े नहीं जा सकते, ऐसे भोगोपभोगों को कौन विद्वान–समझदार–ज्यादती व आसक्ति के साथ सेवन करेगा?

विशदार्थ – भोगोपभोग कमाये जाने के समय, शरीर, इन्द्रिय और मन को क्लेश पहुँचाने का कारण होते हैं। यह सभी जन जानते हैं कि गेहूँ, चना, जौ आदि अन्नादिक भोग्य द्रव्यों के पैदा करने के लिये खेती करने में एड़ी से चोटी तक पसीना बहाना आदि दु:सह क्लेश हुआ करते हैं। कदाचित् यह कहो कि भोगे जा रहे भोगोपभोग तो सुख के कारण होते हैं। इसके लिये यह कहना है कि इन्द्रियों के द्वारा सम्बन्ध होने पर वे अतृप्ति अर्थात् बढ़ी हुई तृष्णा के कारण होते हैं, जैसा कि कहा गया है – 'अपि संकल्पिता: कामा:०'

'ज्यों ज्यों संकल्पित किये हुए भोगोपभोग, प्राप्त होते जाते हैं, त्यों त्यों मनुष्यों की तृष्णा बढ़ती हुई सारे लोक में फैलती जाती है। मनुष्य चाहता है कि अमुक मिले। उसके मिल जाने पर आगे बढ़ता है, कि अमुक और मिल जाय। उसके भी मिल जाने पर मनुष्य की तृष्णा विश्व के समस्त ही पदार्थों को चाहने लग जाती है कि वे सब ही मुझे मिल जायँ। परन्तु यदि यथेष्ट भोगोपभोगों को भोगकर तृप्त हो जाय, तब तो तृष्णारूपी सन्ताप ठण्डा पड़ जायगा। इसलिए वे सेवन करने योग्य हैं। आचार्य कहते हैं कि वे भोग लेने पर अन्त में छोड़े नहीं जा सकते, अर्थात् उनके खूब भोग लेने पर भी मन की आसक्ति नहीं हटती,' जैसा कि कहा भी है – 'दहनस्तृणकाष्ठसंचयैरपि०'

'यद्यपि अग्नि, घास, लकड़ी आदि के ढ़ेर से तृप्त हो जाय। समुद्र, सैकड़ों नदियों से तृप्त हो जाय, परन्तु वह पुरुष इच्छित सुखों से कभी भी तृप्त नहीं होता। अहो! कर्मों की कोई ऐसी ही सामर्थ्य या जबरदस्ती है।' और भी कहा है – 'किमपीदं विषयमयं०'

'अहो! यह विषयमयी विष कैसा गजब का विष है कि जिसे जबरदस्ती खाकर यह मनुष्य, भव भव में नहीं चेत पाया है।'

इस तरह आरम्भ, मध्य और अन्त में क्लेश–तृष्णा एवं आसक्ति के कारणभूत इन भोगोपभोगों को कौन बुद्धिमान इंन्द्रियरूपी नलियों से अनुभवन करेगा? कोई भी नहीं।

यहाँ पर शिष्य शंका करता है कि तत्त्वज्ञानियों ने भोगों को न भोगा हो यह बात सुनने में नहीं आती है। अर्थात् बड़े–बड़े तत्त्वज्ञानियों ने भी भोगों को भोगा है, यही प्रसिद्ध है। तब 'भोगों को कौन बुद्धिमान्–तत्त्वज्ञानी सेवन करेगा?' यह उपदेश कैसे

मान्य किया जाय? इस बात पर कैसे श्रद्धान किया जाय? आचार्य जवाब देते हैं – कि हमने उपर्युक्त कथन के साथ 'कामं अत्यर्थं०' आसक्ति के साथ रुचिपूर्वक यह भी विशेषण लगाया है। तात्पर्य यह है कि चारित्रमोह के उदय से भोगों को छोड़ने के लिये असमर्थ होते हुए भी तत्त्वज्ञानी पुरुष भोगों को त्याज्य–छोड़ने योग्य समझते हुए ही सेवन करते हैं और जिसका मोहोदय मंद पड़ गया है, वह ज्ञान–वैराग्य की भावना से इन्द्रियों को रोककर इन्द्रियों को वश में कर शीघ्र ही अपने (आत्म) कार्य करने के लिये कटिबद्ध–तैयार हो जाता है – जैसा कि कहा गया है – 'इदं फलमियं क्रिया०'

'यह फल है, यह क्रिया है, यह करण है, यह क्रम–सिलसिला है, यह खर्च है, यह आनुषंगिक (ऊपरी) फल है, यह मेरी अवस्था है, यह मित्र है, यह शत्रु है, यह देश है, यह काल है, इन सब बातों पर ख्याल देते हुए बुद्धिमान पुरुष प्रयत्न किया करता है। मूर्ख ऐसा नहीं करता।'।।१७।।

दोहा – भोगार्जन दुःखद महा, भोगत तृष्णा बाढ़।
अंत त्यजत गुरु कष्ट हो, को बुध भोगत गाढ़।।१७।।

गाथा - १७ पर प्रवचन

उत्थानिका – फिर शिष्य कहता है कि भगवन्! धन के कमाने में यदि ज्यादातर पाप होता है,.. पैसा कमाने में पाप तो बहुत होता है, बात तो आपकी सत्य है। कहो, ठीक होगा? सीधे कमाये तो भी पाप तो पाप ही है वहाँ। **और दुःख का कारण होने से धन निंद्य है,..** महाराज! यह लक्ष्मी कमायी, वह तो ज्यादातर तो पाप ही होता है। बहुत तो पाप ही होता है और दुःख का कारण होने से पैसा तो निन्द्य है, निन्दित है। पैसा, लक्ष्मी तो निन्दा के योग्य ही है। **तो धन के बिना भोग और उपभोग भी नहीं हो सकते,..** परन्तु एक बात है, कहते हैं। दोनों प्रकार से कहो परन्तु धन के बिना भोग-उपभोग मिले, ऐसा है? ऐई! पैसा न हो तो मकान किस प्रकार बनाना? यह दाल, भात, रोटी, किस प्रकार खाना, चाय हमेशा चाहिए, दूध उकाली चाहिए, सर्दी में पाक चाहिए, गर्मी में मलमल (का) वस्त्र चाहिए, चातुर्मास में गर्म कपड़ा चाहिए। वह निकालना कहाँ

से ? ऐसा शिष्य पूछता है। महाराज! लक्ष्मी निन्द्य है और दु:ख का कारण है, यह बात भी सत्य है। परन्तु धन के बिना भोग-उपभोग... एक बार भोगा जाये, ऐसी चीज़—दाल, भात, सब्जी। बारम्बार भोगी जाये ऐसी चीज़ - कपड़ा, मकान, और स्त्री। वह सब पैसे के बिना कुछ मिलता होगा ? कहीं पैसे के बिना मुफ्त मिलते होंगे ?

इसलिए उनके लिये धन होना ही चाहिए,.. उनके लिए तो लक्ष्मी (चाहिए)। भोग-उपभोग के लिए तो लक्ष्मी चाहिए न! दूसरा तो एक ओर (रहो)। हमारे पुण्य-दान के लिए नहीं (चाहिए), लो! जाओ, कहते हैं। समझ में आया ? दान करूँगा और पूजा करूँगा और उसके लिए कमाऊँ, वह तो पाप है, यह तो ठीक है, उसके लिए कहीं लक्ष्मी नहीं चाहिए परन्तु यह खाने-पीने की आवश्यकता पड़े, बारम्बार भोगने की (आवश्यकता पड़े), वह चीज़ भोग-उपभोग में उसके लिए तो लक्ष्मी चाहिए, उसका क्या करना ? उसके लिए धन होना चाहिए या नहीं ? **और इस तरह धन प्रशंसनीय माना जाना चाहिए।** भोग-उपभोग में काम आवे, इस अपेक्षा से तो लक्ष्मी ठीक कहो। ठीक है, ऐसा तो कहो। भारी लगायी है, हों!

इस विषय में आचार्य कहते हैं कि 'यह बात भी नहीं है'.. सुन! **अर्थात् 'पुण्य का कारण होने से धन प्रशंसनीय है,' यह जो तुमने कहा था, सो वैसा ख्याल कर धन कमाना उचित नहीं, यह पहिले ही बताया जा चुका है।** कहा ? पुण्य करूँगा, उसके लिए कमाना और धन इकट्ठा करना, इसका तो पहले तुझे निषेध किया। **'भोग और उपभोग के लिये धन साधन है,' वह जो तुम कह रहे हो। सो भी बात नहीं है,..** एक बात... बराबर है यहाँ ? कपड़े पहनने को चाहिए, खाना-पीना चाहिए, नौकर की सुविधा चाहिए, वृद्धावस्था हो, दो व्यक्ति हो तो काम करे। इस साधन के लिए तो पैसे की आवश्यकता है या नहीं ? दूसरी तो एक ओर रही अब, लो! **यदि कहो क्यों ? तो उसके लिये कहते हैं..** यह भी तेरे धन को इकट्ठा करने की आवश्यकता नहीं है, क्योंकि भोग और उपभोग में दु:ख ही है, सुख नहीं—ऐसा कहते हैं।

आरंभे तापकान्प्राप्तावतृप्तिप्रतिपादकान्।
अंते सुदुस्त्यजान कामं कामान् क: सेवते सुधी:।।१७।।

कहते हैं कि **अर्थ – आरम्भ में सन्ताप के कारण..** समझ में आया? क्या? भोग और उपभोग। जो चीज़ तू भोगना चाहता है और जो बारम्बार भोगी जाती है, वह चीज़ शुरुआत में ही आरम्भ और पाप का कारण है। आताप.. आताप.. आताप.. समझ में आया?

मुमुक्षु : .....

पूज्य गुरुदेवश्री : हाँ। उसमें वहाँ पहले आताप है, आताप है, आकुलता है-ऐसा कहते हैं। पहली शुरुआत में। **और प्राप्त होने पर अतृप्ति के करनेवाले..** मिलने के बाद भी तृप्ति नहीं होती। पैसे की, भोग की, इज्जत की, मकान की। समझे? चलती ही जाती है तृष्णा। भोग सुख में तृप्ति कहाँ है वहाँ? धूल भी नहीं है। तृप्ति तो आत्मा में है। इस शान्ति को तू देखता नहीं। आत्मा में शान्ति है, तृप्ति है। वह भगवान आत्मा सच्चिदानन्दस्वरूप है। इसकी दृष्टि करने से जिसे तृप्ति हो ऐसा है। बाहर भोग-उपभोग में तृप्ति नहीं है। लकड़ी में अग्नि, अग्नि में लकड़ी जितनी डालते जायें, उतनी अग्नि बढ़ती ही जाती है। भभकती है, अग्नि भभकती है, बुझती नहीं। जितने भोग-उपभोग करता जाये, ऐसे आताप भभकता जाता है, तृष्णा और कषाय बढ़ती जाती है। तुझे सन्तोष नहीं होता, ऐसा कहते हैं। इतना भोग भोगें, लो! इतना खा लें फिर अपने को (शान्ति होगी)। धूल भी नहीं होगी। अतृप्ति के करनेवाले। जवान अवस्था हो, वृद्धावस्था हो तो भोग से तृप्ति करता नहीं। अब बन्द करो, खाना-पीना और सब तृष्णा कम करो।

शुरुआत में ही सन्ताप, बीच में अतृप्ति का कारण **अन्त में जो बड़ी मुश्किलों से भी छोड़े नहीं जा सकते,..** समझ में आया? वे छूटें, छूटना और उनसे वापिस हटना महा कठिन है। भोग की तृष्णा चोटी-काँटा की तरह कठोर है। छोड़ी नहीं जाती, छूटते उसे छोड़ना, उस घटाना महा कठिन है। दारूडी (एक वनस्पति) के काँटे जैसा। दृष्टान्त नहीं दिया इसमें! दारूड़ी का काँटा ऐसा बारीक होता है। **ऐसे भोगोपभोगों को कौन विद्वान-समझदार-ज्यादती व आसक्ति के साथ सेवन करेगा?** समझे? आसक्ति के साथ में सेवन करनेयोग्य है, ऐसा चतुर व्यक्ति कैसे मानेगा? भोग-उपभोग में तो पाप है, अतृप्ति है, आताप है, आकाम है, तृष्णा है, उसमें कहीं सुख नहीं है। आहा..हा..! कहो समझ में आया? पुण्य के लिए कमाना नहीं और इन भोग-उपभोग के लिए भी कमाना नहीं। कहते हैं कि इन भोग-उपभोग में दुःख है, ऐसा कहते हैं।

मुमुक्षु : .....

पूज्य गुरुदेवश्री : काम आया, उसमें भोग-उपभोग में सुख नहीं है। आत्मा में दृष्टि कर। पुण्य कमाने से फिर पुण्य होगा, उसमें लाभ नहीं है। कर आत्मा में (दृष्टि), ऐसा यहाँ कहते हैं। समझ में आया?

मुमुक्षु : पेट भरनेमात्र....

पूज्य गुरुदेवश्री : पेट भरना नहीं, पूरी सामग्री भोग-उपभोग की चाहिए, उसका क्या करना? वहाँ धूल में भी सुख नहीं है, कहते हैं। सुन न! शुरुआत में आताप, मध्य में अतृप्ति और अन्त में छोड़ना कठिन पड़े। घटना, घटाना। आहा..हा..! सिर घूम जाये। पाँच-पाँच लाख, दस लाख, पचास लाख हुए हों और फिर अब, अब सन्तोष कर, अब सन्तोष कर, घटा दे, अब घटा दे। हाय.. हाय.. दूसरे का बढ़े और हमारा क्यों घटे? दूसरे का बढ़ जाये और हमारा घटे तो मर जायेंगे नहीं तो हम। ओहो..! गजब! मूढ़ ने मार डाला, कहते हैं। मूढ़ की मान्यता ने इसे मार डाला है। भोग-उपभोग में भी आताप है, उसका इसे भान नहीं है। आहा..हा..!

हम सुखी हैं। स्त्री, पुत्र, कुटुम्ब, मकान, पैसा, स्त्री, (सब है)। धूल है, सुन न अब। उसकी ओर का लक्ष्य करना, वही आताप है। उसके भोग में कभी भी तृप्ति नहीं होगी और स्त्री, लम्बी लार, वह लार छोड़ने से छूट नहीं सके। ठेठ तक गृद्धि रहा करेगी। उसकी भोग-उपभोग की गृद्धि। आत्मा में शान्ति है, उसकी दृष्टि किये बिना तेरा कोई उपाय शान्ति का नहीं है। कहो, समझ में आया इसमें? **समझदार-ज्यादती व आसक्ति के साथ सेवन नहीं करेगा?**

विशदार्थ - भोगोपभोग कमाये जाने के समय, शरीर, इन्द्रिय और मन को क्लेश पहुँचाने का कारण होते हैं। देखो! यह कमाने में बैठा हो, पूरे दिन शरीर को पसीना उतरे, मलिनता हो, खाने-पीने का योग न हो, खाने-पीने का कभी मिले, यह कमाने बैठा हो तो पड़ा हो दुःखी। **भोगोपभोग कमाये जाने के समय, शरीर, इन्द्रिय और मन को क्लेश...** पहुँचता है। देखो! इन्द्रियाँ ऐसे सूख जाती हैं। शरीर काला हो जाता है, मलिन हो जाता है अन्दर पूरे दिन खाता न हो, कमजोर शरीर हो परन्तु बैठना पड़े

वहाँ दुकान पर। ग्राहक अच्छा आया हो, उसे सम्हालने के लिए (बैठना पड़े) ऐसे दुःख हैं, बापू! सब दुःख ही है, वहाँ होली है।

मुमुक्षु : परन्तु पैसा तो मिलता है।

पूज्य गुरुदेवश्री : यही कहते हैं। इसे कमाने के लिए यह सब दुःख होता है, वर्तमान ही दुःख है, कहते हैं। बाद में तो दुःख होगा तो फिर भोग-उपभोग में भी दुःख है। वहाँ कहाँ सुख है? ऐसा यहाँ तो कहते हैं।

शरीर, इन्द्रिय और मन को क्लेश पहुँचाने का कारण होते हैं। वह तो क्लेश है। कमाना परन्तु भोग, भोग में कमाने के लिए क्लेश.. क्लेश.. आकुलता.. आकुलता.. आकुलता.. **यह सभी जन जानते हैं कि गेहूँ, चना, जौ आदि अन्नादिक भोग्य द्रव्यों के पैदा करने के लिये खेती करने में एड़ी से चोटी तक पसीना बहाना आदि..** लो! क्या कहते हैं? **यह सभी जन जानते हैं..** यह गेहूँ, चना, जौ इस खेती में बोते हैं, कितनी मेहनत करनी पड़ती है लोगों को बेचारों को। यह कहते हैं, देखो।

एड़ी से चोटी तक पसीना बहाना पड़ता है। अकेले कपड़े छोड़ दिये हों, चैत्र महीने की (धूप) हो। यह बोवे और यह (फसल) काटे, आहाहा! ऐसी गर्मी। बनिया हो तो भी वहाँ दुकान पर बैठना पड़े। अरे! परन्तु यह कपड़ा सम्हलता नहीं। परन्तु यह सब धन्धा, इसमें उघाड़े किस प्रकार बैठना? सभी महिलायें आयी हैं, ऐसा दुःख सहन करके भी कमाने बैठता है। वहाँ होली सुलगती है, तुझे दुःख की (होली) है, देख तो सही।

मुमुक्षु : करना क्या इसका उपाय क्या?

पूज्य गुरुदेवश्री : इसका उपाय आत्मा की दृष्टि कर, दूसरे पुण्य-पाप की तृष्णा और रुचि छोड़, भोग-उपभोग की रुचि छोड़, कमाने की रुचि छोड़, आत्मा की दृष्टि कर। तुझे इसके अतिरिक्त शान्ति तीन काल में (होगी नहीं)। आहा..हा..! इसके लिए तो यह उपदेश करते हैं। समझ में आया?

अन्नादिक भोग्य द्रव्यों के पैदा करने के लिये.. एक मकान बनाना हो तो देखो न कितनी खबर पड़ती है? क्यों चिमनभाई! कैसे मुँह काला हो गया था, लो! धूप में खड़े रहना पड़े, वहाँ कोई सिर पर छतरी लेकर खड़ा रहा जाये? ऐ मोहनभाई! मकान बनाना

हो, वहाँ खड़े रहना पड़े। वह कहीं वापस ऐसे जाये, ऐसे देखना पड़े, ऐसे देखना मानो कोई फिर ऐसे कह जायेगा, कोई ऐसे ले जायेगा अथवा यहीं कहीं बैठा होगा। उस ओर दीवार के सहारे बैठा रहता होगा, काम नहीं करता होगा। आधे घण्टे वहाँ जाना पड़े। ऐसे से ऐसे... ऐई! उसमें अभी की यह सब बदल गयी है। आहा..हा..! दाडिया और कारीगर और.... वह तो जरा सी निवृत्ति मिले तो बैठे ही हों। और फिर सेठ आवे तो फिर खड़े होकर शुरु करे। ऐई! कहते हैं कि वहाँ भी चिन्ता है, बापू! इस मकान चुनाने में चिन्ता है। भोग्य- यह मकान भोग का स्थान है न? कपड़े बनाने में...।

मुमुक्षु : बाँहे से (पीछे से) सुख है।

पूज्य गुरुदेवश्री : वह धूल में पीछे से सुख नहीं है, यह कहते हैं। पहले दुःख है, पीछे से दुःख है, ऐसा यहाँ कहते हैं। यह तो बताते हैं दुःख है। आत्मा में आनन्द है, भाई! आत्मा ज्ञानानन्दस्वरूप है। उसकी दृष्टि कर और उसका ज्ञान कर, उसमें आनन्द है, उसमें धर्म है; उसके अतिरिक्त कहीं आनन्द और सुख नहीं है। मर जाये, सूख जाये तो कुछ है नहीं, ऐसा कहते हैं। आहा..हा..!

मुमुक्षु : .....घर का घर में नहीं होवे न?

पूज्य गुरुदेवश्री : वहाँ भी फिर होली है। यह तो पहले कह गये। खाने-पीने के समय पहली तृष्णा, अतृप्ति और अन्त में छोड़ना कठिन-तीन बोल तो कह गये। बाद की बात, यह तो पहले की बात की, वह बाद की बात की। समझ में आया? पूज्यपादस्वामी ने जगत के सब पहलू देखकर (बात की है)।

मुमुक्षु : .....

पूज्य गुरुदेवश्री : नहीं, उसमें है न! यह सब भरा हुआ है। **अन्नादिक भोग्य द्रव्यों के पैदा करने के लिये खेती करने में..** खेती करने में, दुकान में बैठने इत्यादि में, उसे सम्हालने में **एड़ी से चोटी तक पसीना बहाना..** कितना किया है यह तुम्हारे पिता ने? अभी तक मजदूरी की है या नहीं सब? उघाड़े शरीर, यह और यह... मजदूरी की तो भी कुछ पैसे इकट्ठे हुए नहीं। तुम्हारी बात करते हैं वासुदेव की। कहा, अभी तक बहुत मेहनत की पाप की, पाप के लिये, कमाने के लिये, यह इकट्ठा करने के लिये बहुत किया परन्तु

हुआ नहीं कुछ। यह यहाँ कहते हैं। पाप, पाप और पाप। कमाना पाप, लड़के के लिये पाप, स्त्री के लिये पाप, पैसा इकट्ठा करूँ, इज्जत के लिये पाप और पाप किये। कहते हैं। धर्म तो नहीं किया परन्तु पुण्य भी नहीं किया, ऐसा कहते हैं। आहा..हा..! एक-एक बात ली है, हों!

मुमुक्षु : स्वर्ग में जाये तो?

पूज्य गुरुदेवश्री : नहीं, नहीं नरक में जाये। यह कहेंगे। यह तो ऐसा कि पैसा भी नहीं हुआ और नया पाप बाँधा। उसको तो पाप से पैसा हुआ, इतना तो वह मानता है, ऐसा। ऐई! वासुदेव! निकाला या नहीं? उसने तो पाप किया, पैसा तो पुण्य के कारण हुआ परन्तु यहाँ तो पाप किया और पैसा भी नहीं हुआ और सुगति भी नहीं हुई, कुछ नहीं हुआ। ऐ.. यह यहाँ कहते हैं।

पूज्यपादस्वामी इसमें कहते हैं कि शुरुआत कमाने में पाप, भोगने में पाप। सर्वत्र दुःख, दुःख और दुःख है। **अन्नादिक भोग्य द्रव्यों के..** लक्ष्मी और अन्न, मकान, यह विवाह करना हो तो गरीब मनुष्य को कितनी मेहनत करनी पड़ती है, देखा? एक स्त्री के लिये कितना... समझे न? ऐसा कुछ बोलते हैं, भाषा कुछ बोलते हैं। कितना करे! ऐसी सब कुछ भाषा है। एक लाना हो तो ऐसा कितना सब खोना पड़े। ऐसी कुछ भाषा है, सुनी होगी, अभी मस्तिष्क में याद रह गयी। 'एक आवे बहू तो बेचाये सहू' ऐसा कहते हैं, लो! अब और याद आया। और यह तो सुना हुआ हो न पूर्व में, कोई बहुत वर्ष की बात हो। यह तो ५०-६० वर्ष पहले सुनी हुई होगी, परन्तु यह बात मस्तिष्क में आ गयी। ऐसा बोलते थे पहले, हों! 'एक आवे बहू तो बेचाये सहू' ऐसा कहते थे। हाँ, हाँ कहते, हों! यह तो सुनी हुई बात है। यह याद नहीं आता था परन्तु याद करा दी। एक बहू के लिये तो कितनी तड़फड़ मारता है, कितनों की सिफारिश करता है, ऐसा भाई! हमारे एक लड़का अच्छा है, हों! ऐसा है, वैसा है, फलाना है, अमुक है। आहा..हा..! उसमें फेर में या शरीर में कुछ कमी हो और उसका विवाह करना हो...

मुमुक्षु : अच्छे घर की बहू तो पचास-पचास हजार लावे।

पूज्य गुरुदेवश्री : वह लावे तो भी दुःखदायक है, यह कहते हैं। पाप है।

मुमुक्षु : पहले बेचते थे अब तो...

पूज्य गुरुदेवश्री : यह अभी ऐसा बहुतों को है बेचारे को। एक बहू के लिये तो पूरी कठिनाई पड़े। हम तो सब कितने दृष्टान्त तुमको दें ? यहाँ तो सब देखा है न ! एक स्त्री के लिये बेचारा गरीब मनुष्य हो साधारण, अरे ! रीतसर ठीक हो। पचास-पचास हजार की, लाख की पूँजी हो, शरीर में कुछ साधारण हो और किसी को खबर पड़ गयी हो, अब करना क्या ? गुप्त-गुप्त हो जाये तो दिक्कत नहीं।

एड़ी से चोटी तक पसीना बहाना.. लड़की लाने को, कन्या लाने को, ऐसा कहते हैं। दुकान में तो निवृत्त थे न ! धन्धा-बन्धा अपने घर का, हमने सब जाना था। मगनभाई ! दुकान घर की थी, हमारे पिताजी थे और घर की दुकान, इसलिए हमें काम कुछ ऐसा नहीं, सब देखते। बहुतों का देखा है। आहा..हा.. ! गजब भाई ! दृष्टान्त दिया, हों !

दुःसह क्लेश हुआ करते हैं। लो ! अरे ! पैसेवाले को एक कन्या विवाहनी हो तो कितना हो विचारो तो सही, पूछो तो सही, खबर पड़े। उसमें कुछ काली हो, थोड़ी सलोनी न हो और उसे अभी के लड़के से विवाहना, अरे ! पसीना उतर जाये। ऐई ! हमें खबर है या नहीं सब ? जरा सी काली हो और जरा सा शरीर में अन्तर हो या तो बहुत लम्बी हो या बहुत ठिगनी हो, उसे विवाहना हो और ये लड़के अभी के पास करें, मर जाना पड़े बेचारे को। सिफारिश करे। रामजीभाई के पास जाये, अमुक के पास जाये, हमारी किसी से सिफारिश करो। क्यों भगवानभाई -ऐसा होता है या नहीं ? हाँ, हाँ, हाँ, परन्तु हमें तो सब खबर है न एक-एक बात की खबर है। जहाँ डग किसके भरते हैं, किस प्रकार (भरते हैं), सबकी खबर है।

यहाँ तो कहते हैं कि यह भोग की अनुकूलता... यह कन्या है, उसे विवाह करने में अनुकूल लेने जाये, वहाँ ऐसे चोटी तक पसीना उतरता हो, खाना भावे नहीं। समझ में आया ? आहा..हा.. ! एक तो रवारी का लड़का छोटा, अभी तो दो वर्ष का हुआ, दो वर्ष का, वहाँ उसकी माँ को चिन्ता। यदि अभी से सगाई नहीं आवे तो बड़ी उम्र में कठिनाई पड़ेगी। समझ में आया ? ऐई ! हमारे हिम्मतभाई को यह खबर है। अभी तो दो वर्ष का हुआ नहीं। समझे न ? अभी से नहीं, मँगनी नहीं हो, सगाई कहीं कर दें... क्या कहलाता है ?

....ऐसा कहते हैं न ? क्या कहा जाता है ? नोंध दो, दूसरी भाषा कहते हैं। चौपड़ा होगा तो कुछ काम आयेगा कहीं। कुछ कहते अवश्य हैं, परन्तु वह भाषा याद नहीं है। अनिच्छा के शामिल किया होगा, सगाई में घसीटा होगा तो कुछ होगा। फिर बड़ी उम्र में उन लोगों को बड़ी मुश्किल पड़ती है। पन्द्रह-बीस वर्ष का हो, फिर भारी मुश्किल। यह सब सिर पर दुःख है, कहते हैं। भोग प्राप्त करने में जाये, वहाँ भोग के लिये शुरुआत में ऐसे दुःख भोगे। इसलिए छोड़ होली। भोग में सुख नहीं है, पैसे में सुखी नहीं है। सुख तो आत्मा में ले। यह आत्मा में आनन्द है, वहाँ श्रद्धा और ज्ञान कर, वह करनेयोग्य है। विशेष कहेंगे....

(**श्रोता :** प्रमाण वचन गुरुदेव!)